बेटी की पाती

प्रमिला गगल



कृष्ण जनसेवी एण्ड को०

बीकानेर

पृष्ठ सख्या 68+8=76

प्रथम सस्करण 'अक्षय ततीया 1987

मूल्य 22 रु मात्र

प्रकाशक कृष्ण जनसेवी एण्ड को
दाऊजी मदिर भवन बीकानेर

मुद्रक जनसेवी प्रिन्टर्स दाऊजी मदिर बीकानेर

जन-कवयित्री : श्रीमती प्रमिला गगल

वर्षों से बीकानेर को और प्रकारान्तर से राजस्थान को एक ऐसी कवयित्री की तलाश थी जो सामाजिक संवेदना को काव्य रूपों में रूपायित कर सके, अपनी वेदना को जन-वेदना से जोड़कर कविता और मनुष्य के चिरंतन रिश्ता को अभिव्यक्ति दे सके, सहज सम्प्रेषणीयता किंतु गहन मार्मिकता के साथ पाठक श्रोता को भीतर तक 'छू' सके, संवेदना के गहरे स्तरों तक अपनी पैठ कर सके और बिना हिचक से जनता से जुड़ने वाली कविता 'रच' सके। श्रीमती प्रमिला गगल के रूप में एसी एक कवयित्री हमें मिली है।

उनका मूल स्वर 'पीड़ा' है पर पीड़ा जनित नैराश्य अथवा हीनता उनकी कविताओं पर कभी भी हावी नहीं होती। पीड़ा की तीव्रता संघर्ष की भावना को और कभी-कभी विद्रोह के स्वरों को मुखरित करती हुई लगती है। दामोदर विद्रोही की यह बहन भीतर से विद्रोहिणी है। सामाजिक घात-प्रतिघात से विद्रोह, मानव को 'क्षुद्र' बनाने वाले किसी भी षडयन्त्र से विद्रोह, जमी हुई पैशाचिक व्यवस्था से विद्रोह और यहां तक कि सामाजिक कर्मकाण्ड बने हुए धर्म' से विद्रोह। व्यथा से पिरोये हुए उनके शब्द अनवरत संघर्ष के अनवरत यात्री बन जाते हैं। अपने सृजन की सार्थकता वह इसी में समझती है कि व्यवस्था के इस "आतंक" से जूझ सके।

आज के युग में समय की चिंताओं से निरपेक्ष कौन रह सकता है? अदृश्य और गहरे सत्य की तलाश के नाम पर कविता के रूपवाद में खोये हुए लोग भले ही तटस्थ मुद्रा धारण कर लें, आज के यथार्थ का 'भोक्ता' अथवा संवेदनशील 'द्रष्टा' तो उससे अछूता नहीं रह सकता। दहेज,

नारी–दहन उत्पीडन, ग्रातकवाद ग्रौर निर्दोष व्यक्तियो की हत्या होती रहे ग्रौर कोई कवि ग्रथवा कवयित्री फूल–पत्ती की बात ही करती रहे— यह विरोधाभास भला कैसे चल सकता है ? क्रौंच पक्षी की पीडा को सनातनता किसी ने तो दी ही होगी ? विरहिणी यक्षिणी की वेदना को किसी ने तो समझा ही होगा ? दीन हीन लोगो के दारिद्रय से कोई तो संवेदित हुग्रा होगा ? कविता मानव से शुरू होकर मानव तक समाप्त होती है या या कहें कि "मानव' नामधारी ग्रादमी को "मानव" बनाती है। उसका नया रचाव करती है, उसे पुनंसस्कारित करती है। श्रीमती प्रमिला गगल यही सब कुछ कर रही है। वर्षों से निरन्तर, बिना रुके, ग्रनवरत । उनकी कविताए एक जीवन दर्शन है जो मनुष्य को मनुष्य बनाये रखती है।

उनकी कविताग्रा क तीन कोण हैं–सार्थकता, प्रासगिकता ग्रौर प्रेषणीयता। एक चेष्टा है–सत्य से साक्षात्कार ग्रौर एक लक्ष्य है शाश्वत मूल्यो की परिक्रमा।

उनकी कविताग्रा मे छलछलाता देश प्रेम है। उनकी 'भारतीयता न तो उन्ह ग्राचलिकता से काटती है ग्रौर न ग्रन्तर्राष्ट्रीय बधुत्व ग्रथवा सार्वभौमिकता से ग्रलग ही करती है। देश के नौजवानो [युवक–युवतियो] की सामर्थ्य मे उनको पूर्ण ग्रास्था है। भाषा, धर्म, वर्ण ग्रादि कटावो ग्रौर छलावो को तोडकर एक सम्पूर्ण मानव को फलता-फूलता हसता–खिलता ग्रौर पनपता देखना चाहती है। ग्रपनी धरती स लगाव है उन्ह। एक लोक कल्याण मूलक जीवन दृष्टि हैं उनम। उनकी कविताग्रो मे सामाजिक दृष्टि है तो सौंदर्य की प्रतीति भी है। व्यक्तिवादी, भौतिकता की चकाचौंध उनकी कविताग्रा म स्थान नही पाती— यदि किसी को स्थान मिलता है तो वह है खाचा से हटी–कटी 'पूर्ण मानवता' ।

कविता क्राति की तरह सीधा परिवर्तन नही करती - वे यह जानती हैं पर कविता परिवर्तन का मानस तो बना ही सकती है। परि–वर्तन होने की स्थिति मे उसे सही दिशा ग्रौर गति तो दे ही सकती है। मनुष्यता की प्यास को तीव्र तो बना ही सकती है। श्रीमती प्रमिला गगल की कविताए इसी दिशा की सकेतिकाए हैं।

उन्होंने हिन्दी, उर्दू, भोजपुरी, ब्रज और राजस्थानी मे रचनाएं लिखी हैं। कविता का यह पक्ष भाषाई प्रसाद लोक कल्याणकारी है। भाषाओं के कारण भावो मे भटकाव नही है। उन्होंने गीत, मुक्तक और छद लिखे, कविताए-नज्मे लिखी, गजलो की रचना की और इनसे अलग मुक्त छद मे भी 'रचाव' किया। पर मूल स्वर एक ही रहा-व्यथा से विद्रोह तक का स्वर नारी है अत नारी की वेदना को वे जानती हैं पर वेदना का 'वर्णन' करके चुप नही रहती। समाज के 'कोढ' को मिटाने के लिए आह्वान भी करती हैं। यह कोढ कभी दहेज, नारी हत्या एव उत्पीडन के रूप मे सामने आता है तो कभी तस्करी, भ्रष्टाचार, भाई-भतीजावाद, एव रिश्वत आदि का रूप धारण करता है। यही 'कोढ' अपनी अतयतिकता मे आतकवाद बन जाता है। समाज को कोढ मुक्त करना उनकी कविताओ का चरम लक्ष्य है। जब तक यह कोढ कायम है, न दीवाली उन्हे अच्छी लगती है और न होली, न सावन के बादल सुहाते हैं, न ईद रूचती है। मानवता को खोजती उनकी निगाहें जगह-जगह भटकती हैं-मधुमक्खी के मधु सचय की तरह यह भटकाव भी लोक कल्याणकारी है। बहुरुपिये समाज के दामन को चाहे चाक चाक करना पडे पर उसके असली नृशस रूप को उद्घाटित किए बिना वे नही मानती। इस बेपर्दगी मे उन्हे आनद मिलता है। जब-जब दया से नीर झरता है, वे वास्तविक करुणा को तलाशती है पर जब यह करुणा प्यार, वात्सल्य, राग, अनुराग विरह, मिलन कही पर भी नही मिलती तो उनका मोह भग हो जाता है। मोह भग की स्थिति मे मौन नही सघर्ष उनका स्वर बनता है। अहम् चाहे समाज का हो अथवा व्योम का या बादल का, अहम् को चूरना उनकी कविता का अभीष्ट रहता है। उनके अन्तर की ज्वाल को न तो सुधारकर की रश्मियाँ शीतल कर सकती हैं और न सध्या की मुस्कान। वह ज्वाल तो समय पाकर ज्वालामुखी की तरह विस्फोट करना ही जानती है। अन्तर से विद्रोहिणी जो ठहरी प्रमिला मगल।

प्रमिला जी को अनेको कवि सम्मेलनो मे सुनने का अवसर मिला। शब्दो का जोश और आक्रोश उनके चेहरे पर देखा जा सकता है।

|

शब्दों की मर्माहत वेदना चेहरे की भाव भगिमाओ म आ जाती है–उनका चेहरा ही उस कविता की किताब बन जाता है । हजारो श्रोताओ म व बेधडक बोल सकती हैं, बीच मे यदि कोई टोक दे तो उस फटकार सकती हैं, पूरी तन्मयता के साथ तरन्नुम म अथवा तहत म कविता पाठ कर सकती है ।

प्रमिला जी ज्यादातर छद मे लिखती हैं । छद का अपना अनुशासन होता है । इस अनुशासन मे 'कही कही' शथिल्य हो तो अखरने लगता है । आशा है प्रमिलाजी छद के अनुशासन को कही भी शिथिल नही होने देगी ।

समय के साथ-साथ उनकी कविताओ मे और अधिक प्रौढता आएगी भाषा म और अधिक प्राजलता, स्वरो म और अधिक पैनापन और सत्य क प्रति और अधिक आस्था उजागर होगी और य कविताए शाश्वतता की ओर बढती चलेंगी, बढती चलेंगी यही आशा है ।

भवानी शकर व्यास विनोद

अक्षय तृतीया 1987

अनुक्रम

"मैं"

"सुगंध हीन पुष्प हूं,
महत्त्व-हीन वस्तु हूं
धरा गगन प्रलय करे—
अस्तित्व हीन तत्त्व हूं।"

परिचय

"शीतलता का भास कराती
किन्तु प्रज्वलित आग हूं मैं,
वासन्ती शृंगार सजी हूं
पर अबोध वैराग हूं मैं,
अमर-वाणी की साधक पर
धरा व्योम हुंकार हूं मैं
अपने ही पथ की पूजक पर
स्नेह भरा चिराग हूं मैं॥

आकाशवाणी से प्रसारित
29 11 82



बेटी की पाती

चिठिया पाई जो बेटी की ससुराल की
हुई भाव विभोर मा बेहाल सी ॥
दौड़ी-दौड़ी पड़ोसिन के घर वो गई
पढ़ दो जल्दी से कहना खबर क्या नई ? ॥
बीता एक बरस ना मिली कुछ खबर
जल्दी पढ़ दो बहिन ना पड़े है सबर ॥
पढ़ पड़ोसिन जरा हिचकिचाने लगी
बोली माता बता दो लिखा क्या सही ? ॥
क्या बताऊँ लगी लड़खड़ाने जुबा
हाय ! रमिया नहीं जल गई रजुवा ॥
माथ फटने लगी रुक गई धमनिया
मा दहाड़ी कि जस गिरी बिजलिया ॥
क्या जली है ? मुझे चल गया है पता
उन पिशाचों ने आखिर मारी सुता ॥
पैदा होते ही मैं घोट देती गला
दिन विधाता न मुझको दिखाते भला ॥
क्या पता था कि अर्थी है डोली नहीं
उड़ गई मेरी कोयल तू बोली नहीं ।
पूजे देवी देवता करी मानता
तब विधाता ने जाकर दई इक सुता ॥
हर्षा परिवार सब, थी खुशी गाव में
बाभन में ना रही हाय अब गाव में ॥

है यही गेहरी और है यही आगना
तेरा गिर गिर के चलना और नाचना ॥
याद आता नही कब सयानी हुई
बोले मुखिया करो ब्याह् सयानी नही ॥
बेटी राज करेगी सुहागिन सदा
वर मिला राम सा सबको मिलता कहा ॥
कैसे झूठे थे पंडित व झूठी बोली ।
बारह वर्षों की रमिया चढाई डोली ॥
हाथ दुखो कि तुमने सजाया उसे
अर्थी सम डोली में हा ! बिठाया उसे ॥
आख फूटी कि जाते देखा उसे
लौट के फिर न आते देखा उसे ॥
कान में बैन अब तक रुदन के भरे
मां ! बुला लेना जल्दी किया क्या पर ? ॥
दूर ऐसी हुई वह कि होनी गई
फिर हसी यह कहा देखो रोती हुई ॥
सोचा समधी खुशी होगी बेटी सुखी
मार्गे पूरी करी दुहिता हो ना दुखी ॥
हाय ! बेची जमी घर भी रेहन पडा
बिक गये तन के जेवर ये टपरा खडा ॥
पाव चादर के बाहर फैलाती रही
बेटी सुख के लिये घर लुटाती रही ॥
याद आया अचानक थी आई खबर
माता भिजवादो जल्दी से मोटी रकम ॥

जितनी जल्दी हा करना प्रबंध मेरी मा
वर्ना जीना है दुलभ समझ मरी मा ॥
मैं लगा गई मौन हाय करती भी क्या
कुछ बचा ही नही देखती आखिर क्या
किस तरह से तड़प कर जली होगी तू ?
सोचती हू कि कैसे मरी होगी तू ! ॥
झींगुरा, चींटिया से तू डरती सदा
कैसे सह पाई होगी वह आपदा ? ॥
आसमा से कहीं गाज गिरती नही
हाय ! क्या हू मैं जिन्दा क्यामरती नही ॥
कोई मारे सताये कही ना तुझे
भेजा मैंने नही विद्यालाला तुझे ॥
धूल धुटनो की आचल स पोछी सदा
लग न जाये खुरच चिन्ता की सवदा ॥
आते होगे अभी मुह दिखाऊगी क्या ?
हा ! सुता ना रही, ये बताऊगी क्या ? ॥
घर भी उजडा सभी बाग उजडा मरा
गोद सूनी हुई पिंजरा खाली मेरा ॥

आकाशवाणी स प्रसारित
24 4 83

मुक्तक

जो रग सजाये वह तस्वीर बनने नही देंगे
तुमको भारत की तक्दीर बनने नही देंगे,
स्वप्निल रगो को सजाओ सवारो अपनी हद तक
भारत से जुदा वो कश्मीर बनने नही दगे ।

3 5 85 आकाशवाणी से प्रसारित

नाग दहेज

आदि काल से पूजित वन्दित है यह दुर्गा शक्ति मा ।
विद्या वारिधि बुद्धि जीविया की है विमला भक्ति मा ।।
ऊ च-नीच सबकी जो पूजित वह है विष्णु अर्धांगिनी ।
चचला चपला नाम अनेकों वतमान की वह जननी ।।
जीजा बाई मातृ शिवा की सुमत कथा सुनी होगी ।
नाना साहब की दुहिता मैना की व्यथा सुनी होगी ।।
अजर अमर मानस का गायक अमर हो गया जो तुलसी ।
रत्ना से जो मिली उपेक्षा गौरव भी पाई हुलसी ।।
बैठा उसी तने को काटे महा मूख था वह काली ।
पाकर उपालम्भ पत्नी का रघुवशम् जिसने रच डाली ।
सत् व्रत की रक्षा के हित जहा धधकी जौहर ज्वाला ।
भक्ति भाव म हो विभोर अमृत सम विष भी पी डाला ।।
यह भारत है इस भारत की रही सदा आदश नारिया ।
पूजन अचन से रण तक सारथि सीमा वद्ध नारिया ।।
फिर एसी गुचिता धरती पर कैसा हा-हाकार मच रहा ?
शाश्वत परम्परा स्वयवर कैसा अत्याचार मच रहा ?
ऐसी गौरवपूण वन्दना [पर] नित होते क्या अत्याचार ?
नही शम से माथा झुकता नतिक पतन हो रहा आज ।।
लेन देन व्यापार बढा बेटा पर लगी बोलिया है ।
रूप रग गुण अवगुण पीछे पहले बजनी थैलिया हैं ।।
रोता गुण और रूप सिसकता ज्ञान विचार धरे रह जाते ।
बेटा अफसर करे नौकरी सब्ज बाग गहरे हो जाते ।।

बडे ऐंठ पर बापू बहुत दिखलाया अपनी वह मूर्छा ।
थैली से पहले दिखला"। सामान। की लिस्ट समूची ॥
एर गैर नत्थूखैर नहीं जो मुसा ब्याह रचा ले
हम समाज म बड़े प्रतिष्ठित थाना मस इसे पचालें ? ॥
माप जोग पूरा हा जाय तो बटी की भावर पूरी।
गर्वान्वित मस्तक हो जाय वर्ना भावर रह अधूरी ॥
मीला बटी राती जाती स्वजन दहल दहल रह जाते ।
गैया सी मैया डकराती, अरमा पिघल पिघल वह जात ॥
फट जाय स्टोव अचानक जल जाय साड़ी का पल्ला ।
धासे से तेजाब पी गई लटक गया फासी का फन्दा ॥
हाथा की महदी, पैरा की नहीं महावर मिटने पाती ।
डस जाती दहेज की नागिन क्वारे अरमाना सा जाती ॥
मन गढ़न्त कुछ नहीं कहानी नहर तक पहुचाई जाती ।
हाय ! सुता की किस्मत कैसी माता की छाती फट जाती ॥
कितने बने समाज सुधारक केन्द्र नये नित खोले जाते ।
अग्रसन, दाधीच, राम सब जाति शपथ म तोले जात ॥
जब तक मानस स्वच्छ न हागे भौतिकता दूर जायगी ।
मन पर सताप की छाप नहीं पौरपता घर हो जायगी ॥
पुरुपाथ विजय जब पायेगा काला धन अभय न पायेगा ।
विश्वास दिलाती हू सबको फिर नाग दहेज न मयगा ॥

आकाशवाणी से प्रसारित

11 983



बिन्दु काण्ड (खुला पत्र)

लटक गई हा बिन्दु बिटिया बडी रसोई-घर से ।
बिना मौत ही मरी अभागी हा, दहेज के डर से ॥
बिना नाप के मुह फैले हैं बात हजारा लाखों की ।
करते हैं रगा की बातें बिन नक्श बिन खाका की ॥
बीस वर्ष की सिर्फ अवस्था निवासिनी वह राची की ।
भटका देखा बहुत पिता को लिखी बात जो साची थी ॥
करते हो दिन रात एक तुम चिन्तित हो बस मेरे लिये ।
हो दहेज पूरा कैसे भी सभी दुखी हो मेरे लिये
म कन्या थी म अबला थी पर म इतनी नही निरीह
सदा पराया धन क्या समझा बन सकती थी कटक हीन ॥
मारे शर्म हया के कारण कभी नही था मुह खोला ।
बडी आपदा बडी समस्या अपना को मने तोला ॥
लालच खुद होता धन पाकर मै कैसे नागिन बन पाती ।
पीकर दूध साप फुफकारे मुझे नही मुनी डस जाती ॥
मुझे सदा स नफरत बाबुल इन दहेज के नागा से ।
कर दोगे सवस्व न्योछावर मुक्ति नही इन नागा स ॥
इसलिय म अपनी लीला अपने आप खतम करती
बेटी की डोली उठती है अर्थी नही उठा करती ॥
एक नही कितनी ही बिन्दु मर जाती बे—आवाज
वैसे ही कम नही रूढिया और हुई कोढ मे खाज ॥
अपने अपने मानस को अपने आप बदल डालो
इस रगीन चकाचौंध का पैरा तले कुचल डालो ॥
इस दहेज के हवन कुण्ड म कितनी और आहुतिया होगी
कितनी होली और नाच है कितनी ज्वाला और जलेगी ॥

पागल

खड़ा सीखचा के जो पीछे बार बार सिर झटके ।
कभी हस रहा कभी रो रहा हाथ पाव को पटके ॥
सभी उसे पागल कहते हैं सना हीन दुहाई ।
अच्छे खासे एक मनुज की हालत किसने बनाई ॥
जलती चिता देख वह आया अपनी ही बहिना की ।
अतिम दशन उसे हुये ना वह गरीब की बहिना थी ॥
एक बरस से पूव बहिन की शादी की थी धूम से ।
कन्या-दान किया इसी ने दी थी विदाई चूम के ॥
मागो की फिर हुई बढोतरी जिनका आदि न अन्त ।
आखिर मे "ना" कर बैठा होकर भैया तग ॥
एक इसी "ना" के कारण हो गया दुलभ जीना ।
एक जून की दो रोटी बहता खून पसीना ॥
तग हो गई श्वासें गिनती फिर भी आगे राज की ।
फिर दहेज की भूख खा गइ खत्म कहानी रोज की ॥
गला दबाकर मार दिया हाय चरित्र—हीनता का ।
चरित्र-हीन अमीरी जीती कहा चरित्र दीनता का ? ॥
सुनी बहिन की मृत्यु अचानक दगा हुई यह भाई की ।
फूट फूट पागल रोता है यह स्मृति मा जाई की ॥



यज्ञ आहुति

नित नई बालायें आहुतियां बनती है
ये दहेज का यज्ञ न जाने कब पूरा होगा
संघर्षों की बात अगर हो तो भुगतें हम
अमानवीय ढंगों का प्रचलन कब पूरा होगा ?
कहीं जलो तो कहीं जलाई जाती है,
कहीं मारकर लटकाई भी जाती है
धरे–धरे स्टोव वहीं पर फट जाता है—
और कहीं तेजाब पिलाई जाती है।
चूल्हा का तो गया जमाना
आग दिला की जिन्दा है।
गैस लीक होने लगती है
मानवता शर्मिन्दा है ॥
अर्थी करते मिल आनकर
गला घोंट देते हैं लोग,
काट काट बोरी में भरकर
कहीं छोड़ देते हैं लोग।
पशुता की निर्ममता की
जब तक स्थिति बनी रहेगी,
आज की स्थिति से भी बढ़कर
स्थिति अपनी तनी रहेगी।
अपने बलबूते पर जो हो
उससे धीरज धरना सीखो,

कमठ बनकर जीना सीखो
जिओ सदा वह मरना सीखो ।
भौतिक सुख सुविधा के खातिर
पशुता को तो मत अपनाओ ।
जीव जीव का समझ के नाता
हिंसा को मत ताज पहनाओ ॥
ऐसा न हो कहीं तुम्हारी छाया से भी
परे रहे ये नारी जाति ।
सुख साधन तुम को रोयेंगे
ज्वाल बने य नारी जाति ॥

आकाशवाणी से प्रसारित

15 11 84



आर्त्तनाद

नित्य नई खबरें छपती हैं सास बहू के झगड़े ।
घर की आग सड़क पर फैली दो चकमक ज्यों रगड़े ।।
सदा गरीबी अभिशापित थी उससे कहीं अमीरी ।
यही अमीरी बन बैठी है वदनसीव जागीरी ।।
ठाठ बाट वैभव ऐश्वर्य से पालित हैं आशायें ।
आसमान को चाटी छूती असत की इच्छायें ।।
धैर्य और संतोष खा गया, खा गया भाई चारा ।
निज का उदर भरे भडारे छीन-छीन परचारा ।।
कल्पनातीत सुखों की इच्छा अमत भरी हवायें ।
श्वास-श्वास स्वर लहरी गूंजे गुलशन बन फिजायें ।।
सब पर मूढमति आ पड़ा भरी विद्वत्ता हम में ।
नीति कोई हो कूट राज या स्वार्थ सभी है हम में ।।
अमिट नाम खुदवा देंगे अपना बुत बनवाकर ।
आलय धर्म अनाथ या विधवा कर्म हेतु बनवाकर ।।
अपने पापा की पूंजी थे कस रहे सम्हलकर ।
इसी लिये कुछ चन्दा देंगे अपना नाम बदलकर ।।
ऐसे व्यभिचारी विचार जब मन पर हावी होंगे ।
बिना स्वार्थ सत्कर्म कहां बस अपने भावी होंगे ।।
क्या दहेज का कुंड भरेगा स्वाहा होंगी अबलायें ।
स्वार्थमयी सामग्री होगी नारी ही होंगी समिधायें ।।
सोचो जरा गौर से सोचो अक्ल के ठेकेदारो ।
खुले हाथ से दान किया है हम पर जरा विचारो ।।

पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण से टिका हुआ आकाश है ।
इसको तुम मा धरती कहते स्त्री का आभास है ॥
राजनीति मे कूटनीति मे शक्ति भक्ति म देखो ।
लक्ष्मी स्वप्ना की मल्लिका का साझ ओर म देखो ॥
सुमधुर कोकिल कण्ठी गूजे लगती अमृत वाणी ।
झूम झूम लतिका छाया दे वर्षा सुखद सुहानी ॥
सेवा त्याग सदा अपनाया हमने नही सताया ।
निष्ठुर इस समाज ने हमको बलि का बकरा बनाया ॥
पुत्री बन सम्मान पिता को भगिनी बन भैया को दुलारा ।
घर की शोभा बहू बन पति के चरण ओर निहारा ॥
करी आरती मगल टीका युद्ध हित तलवार थमा दी ।
अपने सत के कारण हमने जौहर की ज्वाला सुलगा दी ॥
देवी श्री परमार्थ की देवी अमर नाईटिंगेल हो गई ।
शान्ति देविया मदर टेरेसा आल्वा मिरडेल हो गई ॥
विज्ञान चिकित्सा हेतु नाम हुआ आबेले आरोल का ।
इन्द्रा हुई शहीद खेल म नाम निरुपमा मावड का ॥
हाथ पसारे तुम्हे निहारे त्यागो अपने स्वार्थ को ।
निजता हित कुछ नही मागती अपनालो परमार्थ को ॥
तुम मानव हो इसी लिये बस मानवता की भीख मागती ।
चकाचौंध परित्याग करा बस ममता अपनी सीख मागती ॥
जला जला कर गला दबा कर मत मारो कुछ त्याग मागलो ।
कदम मिलाकर साथ तुम्हारे 'अपनापन" हम स न मागलो ॥

नही दया स जो मानोगे
यह धरती कगाल बनेगी ।
प्रिय सम्बोधन को तरसोगे
चिंगारी जब ज्वाल बनेगी ॥

नया ढांचा

खुले आम तस्करी चल रही
मा बहिनों की लुटती लाज ।
यह भारत क्या वही है भारत
जो था ऋषि मुनियों का ताज ॥
हुई चेतना शून्य बुद्धियां
सोये क्या मनु की संतान ?
एक द्रोपदी के कारण ही
रचा गया कुरु क्षेत्र महान ।
वाल्मिकि ने भूगर्भा हित
रचा दिया मानस का गान ।
बड़ी पुरानी पोथी लगती
सम्भवत किंवदन्ती लगती ।
वेद पुराणों की ये बातें—
पर तुम पर नां हसती लगती ॥
तुम वैज्ञानिक युग निर्माता
तुमको पृथ्वी नई चाहिये ।
आसमान भी सड़ गया है
तुमको नया वितान चाहिये ॥
यह पुराना अपना ढांचा
इसका जोड़ तोड़ कर डालो
तोड़ प्रकृति के नियम प्रमाण
एक नया मानव गढ़ डालो ॥
सिर पर पैर, चले हाथों से,
मुंह से सुने कान से देखें,
आंख श्वास का काम कर फिर
नाक दनादन अमृत घोले ।
कल्पित आंखां से देखो
(उस) मानव को स्वीकार करोगे ?
नहीं जूझना सरल प्रकृति से
अंत 'वही' स्वीकार करोगे ॥

निकले तन से प्राण और
काया फिर करती काम रहे
सम्भवत यह हो सकता—
बिन हड्डी के चाम रहे ॥
कैसी करी विसमति पैदा
घर की इज्जत बाहर बेची
गड्डय भून चना सिर ऊपर
बाजारों और कोठे खेंची ॥
जिस्म बेच कर खा जाते हो
पाठे पर नगी नचवाते
कितनी लम्बी भूख तुम्हारी
काम ! इसका या गज बनवाते ?
इस घर की भगिनी या दुहिता
उस घर बैंटी गिद्ध निगाह
बस रह जाते हो सब कुछ
लेकर निकले ठंडी आहें ॥
कारण पूछ गया तो आया:
इसके मन के दर्पण में,
कितनी ही निष्कलंक श्यामें
पहिचानाग बिन तपण में ॥
अपना मन का मैल और
अपनी कमजोरी का शिकार
अबला बनाए कुछ बन जानी
कुछ तरुणाई में मन का विकार ॥

×

चमक–धमक

इस समाज के सभ्य जगल मे
बैठा काल कुडली कसकर ।
जिस पर भी फुफकार पडे
वह नारी उठता है मरकर ॥
सदियो से सुनती आई हू
ब्याज मूल से प्यारा होता ।
बहुयें तो जलती आई हैं
अब तो साथ म जलता पोता ॥
मजु राधा, हरमीत, सुनीता
राजकुमारी निज जलती है ।
मार जला देने के पीछे
कौन पिशाच प्रवृत्ति पलती है ? ॥
जितना ऊचा शिखर उन्नति का
उतनी ही ऊची आशायें ।
जादू के चिराग से सब कुछ
पा लेने की आशायें ॥
लगी पडोसी से भी होड है
कौन होड म आग निकले ?
सुविधाओ की दौड भाग म
कौन दौड मे आगे निकले ? ॥
कर्महीनता औ आलस ने
घुस पैठी नारीर मे कर ली ।

चमक धमक औ चकाचौंध ने
दिल दिमाग से बुद्धि हर ली ॥
भौतिक सुख औ भोग तृप्ति को
ये सुन्दर हथियार पा गये ।
बेटा बहू औ दहेज में
मानो सुख संसार पा गये ॥
कभी नकद कभी स्कूटर
और कभी ये कार पा गये ।
फ्रिज टेलीविजन वीडियो
कभी वी0 सी0 आर0 पा गये ।
नहीं कटौती इन्हें गवारा
भूखा को सब तुरन्त चाहिये ।
बनी बेटी सड़क पे होगी
इनको तो सब तड़क चाहिये ॥
ये दहेज के लोभी इनकी
दानवता का हाल न पूछो ।
कम दहेज में विदा हुई
डोली की कोई चाल न पूछो ॥
चन्दा सी बिटिया का मुख
वापस भी तुम देख सकोगे ?
मार जला डालेंगे कब ये
इन्हें न तुम भी रोक सकोगे ॥
इनके बेटे सुख के साधन
लाख लाख के चैक बने हैं ।
खाली घर भरने की खातिर
खाली घर के बैंक बने हैं ॥
इस भ्रष्टाचारी दानव को

खत्म हमें ही करना होगा ।
इन दहेज लोलुप भूखों का
बहिष्कार भी करना होगा ।।
जो मानव हो और जिन्दा हो
मानवता पर अधिकार ।
तेरे तो ये शोषक उन्हीं को
हत्या करने का ही अधिकार ।।
अफसम्पन्न का भूत स्वयं
सर पर से उतारना होगा ।
हो गरीब मजदूर भले
मानवता को सवारना होगा ।।
इस चमक दमक की केंचुली को
जब तक उतार ना पाओगे ।
बेटा बेटे वाले बेटी वाले
ये रूप उबार ना पाओगे ।।

7.11.85
आकाशवाणी से प्रसारित



(एक कुंठित स्त्री की मूक वेदना)

मूक–वेदना

ठहर गई सारी गति विधियां
श्वासों में है झंझावात ।
गूंज गूंज चहुं ओर अंधेरा
किसको कहना है गतिमान ? ।।
गति लय स्वर सब मूक हो गये
मन्दिर में है कोप छन्द ।
उतर गया तूफान प्राण में
अधर हो चुके बन्द से बन्द ।।
ठहरा क्यों आंख का पानी
अनजान कब लुढ़क गया ?
अपलक रहा ताकती हतप्रभ
वह पल था जो ठहर गया ।।
वह पीड़ा जो गई कंठ में
स्वर का भी अवरोध बन गई ।
मैं हूं मूक वेदना संहिता
नारी मन का [illegible] बन गई ।।
सीता शकुन्तला दमयन्ती
सब ही पर्याय बन हैं ।
माला दुर्गा जननी ममता
उर गरिमा के भग्न हैं ।।
इतनी शक्ति समाहित मुझ में
फिर भी अबला [illegible] कहलाती ।
स्त्री शब्द से मैं अभिशापित
बात आंधियां [illegible] फिर आई ।।

7 11 85 आकाशवाणी से प्रसारित

एक खत (वेश्या की पुकार भाई के नाम)

मान राखिया का रता है चौक पूरा है आगा ।
मेरे लिये खुशी ना लाया ये मन भावन सावन ।।
रेशम के ये धागे किसके कर में बांधूं ?
मेरा स्वप्न हुआ ना पूरा कौन साधना साधूं ?
आंगन के उस पार खड़ा है दुनिया की नजरों का भाड़ ।
मेरी राखी के नायक ना उभरी हुई कलाई ।।
बार-बार अनुरोध कर रहा बांध दे बहना राखी ।
समझ रहा नर प्रनम को तेरी पन ना राखी ।।

कहने को ना श्याम बहिन के
पर मैं कैसे आम हो गई ।
मेरे रहने भरी अस्मत
कम हो ! नीलाम हो गई ? ।।
अब बहन न तू भाई है
मन बड़ माने मेरा ।
भूख पेट की खातिर तूने
सौदा किया है मेरा ।।
मेरे भी अरमान बहुत थे
मैं भी घर की शोभा बनती ।
लानत तुझ पर आ हतभागे
मैं खुद को भी धोखा समझी ।।
तेरे जैसा कम हीन ना
कोई बहिन ना चाहेगी ।
सावन बीत बिन भाई के
कभी न कोई रोयेगी ।।

नरे जैसे गन्द याग रे
पुतला ने ग्तिहास लिया है।
तरा क्या इतिहास बनगा ?
तू तो बस उपहास बना है ॥
ग्मी देश म हुय वीर व
जग की बहिनें रक्षा पाई।
एक वीर तू भी मरा है
लाज बहिन की बचा न पाई ॥
यह बिस्मिल का देश यही पर
लाल बाल औ पाल भये हैं।
विश्व शान्ति हित गौतम–गाधी
यहा जवाहर लाल हुये हैं ॥
देश की बहिना की रक्षा हित
भगत न चूमा फासीफन्दा।
जन कल्याण हेतु जन्मा था
यहा एक बैरागी बन्दा ॥
लाल बहादुर यही था जन्मा
छोटी सी काया लेकर।
देख सका ना बहिनें विधवा
बना गया मन शकर ॥
वीर सुभाष यही जन्मा था
जय जय हिन्द का नारा।
मा बहिना की लज्जा के हित
दाव प जीवन वारा ॥

इस विमल नाम गिनाऊ
नहीं पाक है वाना ।
हाय ! हमारी खातिर दे गय
वीर जवा कुर्बानी ॥
मुह बोली थी बहिन द्रोपदी
कृष्ण न लाज बचाई ।
तुझसे गैर जाति का अच्छा
बमवती का भाइ ॥
परिस्थितियां वन दर हुइ थीं
फूट फूट कर रोया ।
मुझे माफ करना ओ–इलाही
दामन पाक न पाया ।
एक लगा न् मरा महादेव
जिंदा मरा जनाजा ।
मर मद होना न कहीं तू
बहतर कहीं जनाना ॥
प्रण मेरा है बाधू राखी
मिले जो कोई भाइ ।
मुझे उबार भर नरक से
टूट वही कलाइ ॥

11 9 83
आकाशवाणी से प्रसारित

वेश्या की पुकार

नहीं घृणा से मुझे निहारो दे दो मुझको प्यार ।
मैं भी शोभा बनना चाहूँ प्यारा है घर-बार ॥
इस दुनिया में क्यू आई हूँ नहीं मुझे है ज्ञान ।
क्य [illegible] हुई शिकार हवश की इससे भी अनजान ॥
मेरा भी नारी मन दुखन सदा सदा पाया है ।
पा न सकूंगी यह शायद अब तक जो खोया है ॥
कहते हैं जद्‌दान मुझे उनमें मेरे चन्द्र मकान ।
तुम जैसे न हुये होते क्या होता यह अपना हाल ॥
मैं भी सुता किसी जननी की दूजा भाग्य सितारा ।
बनी उम्र के साथ बन्ध घुंघरू से प्यार हमारा ॥
रात रात की रानी मैं भी जश्न मनाये जाते ।
नहीं उम्र का कोई तकाजा पिता-पुत्र से आते ॥
हुआ एक दिन बड़ा हादसा मिला अभय का दान ।
मरक्षण पाया था जिसका वह था एक जवान ॥
मौके की तलाश थी मुझको भाग गई मैं इक दिन ।
महिला रक्षा हित जो बने थे नारी निकेतन उस दिन ॥
आंख खुल गई उस दिन जाना चकला के ये ठेकेदार ।
शुरू यहीं से जिस्म फरोशी का करते हैं व्यापार ॥
और आत्मा चटक गई फिर फूट फूट कर रोई ।
पता चल गया फिर हुआ का हुआ न करता कोई ।
और उसी दिन जल उठी मेरी प्रतिशोधी ज्वाला ।
इस समाज से लड़ मरने का प्रण मैंने कर डाला ॥

महल झोपड़ी में मैंने फल नहीं कुछ पाया ।
अबलापन का भान हुआ अपना मन भरमाया ॥
अब भी है एकान्त और तम मुझको बड़े दुलार ।
तारों की मुस्कान, स्वयं के आंसू मुझको प्यार ॥
ठेकेदारों औ समाज ने कोई मुझे उबारा ।
स्नेहसिक्त ये आंचल मेरा कोई मुझे दुलारा ॥
द्वन्द्व हृदय का जब छिन्ता है हाहाकार आत्मा करती ।
गृहिणी भगिनी जो बन पाती शांत हृदय की ज्वाला होती ॥

राखियां

कौन पड़ा राखिया कहती स भाई का यादा का ।
आज नही वह हाथ दीखने जा वाध इन धागा का ॥1॥
नेह प्रेम म हम अतीत पर करत क्या हैं झगड़ा लोग ।
नमिन्दा हमको करते हैं, खुद करन है रगड़ा लाग ॥2॥
वहा गय व लाग बाधकर रक्षा का प्रण करत थ ।
मान वान हित दान मान हित हसत हसन मरत थ ॥3॥
आज दुहाइ मरी दकर सनी भ्रष्टाचारा की ।
नाना-वाना मरी इज्जत होड़ लगी व्यभिचारा का ॥4॥
जागो-जागो अब ता जागा आको मरी कामत का ।
म राखी हू रक्षा करती मैं ह मर्यादित जीवट का ॥5॥



थ अथ य स्वाधीनता क पथ क्या सुमन लिय ।
दृश्य बधन काट कर अदृश्य बधन भर दिय ॥
थी लालसा और कामना, उत्थान की निजमान की ।
मान कागज पर दिया और प्राण शोषित कर दिये ॥
कध स कधा भिडाया हाथ म हल ले लिया ।
फाइला क बोझ का हमन सरलतम कर दिया ॥
विज्ञान युग म पैर धर यत्रा स कर ली दोस्ती ।
स्वय बाझिल बन गय तुम को सरलतम कर दिया ॥
अपनी मर्यादा रखी हमस न वो लाघी गई ।
वह तुम्हारे सोमा गज स स्वाथ तक नापी गई ॥
मा, वहिन, परिणीता, सुता कर्तव्य का ही बाध है ।
और हम अपमान की ही आग म डाली गई ॥

लोक गीतो पर आधारित गीत

"उन सभी महिलाम्रा का दद जा ग्रसम, पजाब या ग्रन्य साहित्यिक पहलुम्रा का शिकार बनी। नारी श्राखिर नारी है वह कही की हो उसका हृदय स्पर्शी मम तो एक सा ही होता है। कोई त्यौहार हो पव हो वह यही चाहती है उसका परिवार हसी खुशी स त्यौहारा पर्वों मे शामिल हो यदि विधाता वाम हाता है तो उसका ग्रन्तमन रा उठता है।



सावन

बीतो सूना सावन सूनी रातो भरी

ऐसा मनहूस सावन न आवै सखी ।

[1]

याद आवै जो पिछ का सावन
गूंजी किलकारी घर देहरी आगन
आजु बरसै जो मेह तो महा झर ।
लगी होड़ कौनु अति बरसै सखी ।
ऐसा मनहूस सावन न आवै सखी ॥

[2]

फूल फूले जहां रहे बागान हरे
आजु होनहिं सखी राजु सुनसान घर
जहां मैन हरे मोर घर घर भरे
उहां मरघट कौआ पिकारै सखी ।
ऐसो मनहूस सावन न आवै सखी ॥

[3]

मांग पोंछि गये चुरियां फोरि गये,
दूध पियति गये, बूढ़े बारे गये
रसिया बधवाय वीरनु एसे गये,
बाट जोहूं कि कहु से तो आवै सखी ।
ऐसो मनहूस सावन न आवै सखी ॥

[4]

हाय बज्जुर भई हम धरती सा,
तनु जनु धनु सबु गयो रहि ठगी सी
जिनगी रहि रहि हमहि कचोटन लगी
कालु दूरि खड़ो हि चिढ़ाव सखी ।
ऐसो मनहूस सावन न आवै सखी ॥

दिवारी (दीपावली)

इहा मन को दिया झिनमिलान लगा
अब कैसी दिवारी मनावैं हम ॥

[1]

सार मन के चौवार अंधरे पर,
अब दुआर का दिया कैसे जरे
हाय ममता अभागिन रूठि गई,
अब कौन सा तेल जरावैं हम ।
अब कैसी दिवारी मनावैं हम ॥

[2]

उजियारा नगर आर शहर भर
गाव पूरो अंधरा उसास भरै,
बालु पिटरौल आय के ऐसा बहा,
अब नैनन नीर बहावैं हम ।
अब कैसी दीवारी मनावैं हम ॥

[3]

कहूं भूखन आतैं सिकुड़ती ना
औ गरीबी हम धुढौतो ना,
हाय सिल ना बध इन पटन से,
कैसे भूख से पीछो छुड़ाव हम ।
अब कैसी दीवारी मनाव हम ॥



[3]

गव कोने खड़ी भौजाई रोव
वहु ठाडा दवर सिसकी भरै
कोई वाट जाग ठाग्गी प्रीतम की
वहु जीजा की सारी चिक्कारी भर,
कोर्ई सरहज रोव ननदाइन का
रण कुरग भय मग मुठिया मलै
महु बूढ़ो बाप यहु भैया रोव
गमी ममता की होगी न जरई मवहु ।
पर गमी मो होरो न भेखी मयट्टु ॥

×

होरी (होली)

हारा यहुतक दति चुकी अब तब
पर एसी तो होरी ना देखी कबहु ॥

(1)

ढाल यम से बजे चग नठियन प
गोली दन-दन चली ठाड मजीरन प
गोत वारे हाठ मय मिमकी भरे
पिचकारी वार हाथ कटि क गिरे
रगु दूसरा न काई दिखाइ परै
रगतु एकहि पर मय कटि कटि मर
कहू मन जरै खलिहान जर
हाय एसी त होरी न जरइ कबहु ।
एसी ता होरी ना दखा कबहु ॥

(2)

एक घरिया म स्रात सा बरी भय,
राग धमारि मचाय सा गरि भय
पिचकारिन रग बिखेरत जा,
आजु धाय स गाली मारत था,
गरि कौन है, कौन है अपना, इहा,
खुली आखिन अध हुई गये इहा,
हाय अपनो हि घर ती बिराना लग
एसी नीति अनीति न दखी कबहु ।
ऐसी ता होरी ना देखी कबहु ॥

[3]

एक कोने खड़ी भौजाई रोवै
कहूँ ठाड़ो देवर सिसकी भरै
कोई बाट जोवै ठाड़ी प्रीतम की,
कहु जीजा की सारी पिचकारी भरै,
कोई भरहज रोवै ननदोइन को
रंग कुरंग भये सब मुठिया मलैं
कहु बूढ़ो बाप कहु मैया रोवै
ऐसी ममता की होरी न जरई कबहु ।
पर ऐसी तो होरी न देखी कबहु ॥

×

मत गेलू फाग हाथ में कँस गनू फाग रे ।
हरियाली का राज जहां था हुये लाल बागान रे ।।
कँस गेलू ——— ——

बिन घर आगन बहिना भटके ट्ट रही है मया
सूनी गोदी लिये भटकती नाल को ढूढ़े मैया
सूनी मागें खोज रही हैं उजडा हुआ सुहाग रे
चचल बालायें हिरनी सी भरती जहा उछाल रे
ग्राम वधू की पीठ टोकरी हरे भरे बागान र
गध केसरी जहा महकती मानी वहा सडाघ र
मन मोहक से पख हिलाते पक्षी गान गान रे
झरना की स्वर लहरी पर भरे अनोखी तान रे,
गिद्ध वहा पर नोच रहे ह आज नवा से मास रे
घर आगन गलियारे सून सून सब बाजार र
धुमी–धुमी आखो से देखू उजडा हुआ ससार रे
कहा गई वह नीति पूरबी कहा गया गणराज रे
रग बिरगी इन्द्र धनुष सी जहा चूनरिया धानी
मरघट-कलप कर मर आदमी काई न देता पानी
अमवा के बिरवा म अचानक उग आय क टास रे—

—

वदरिया (वर्षा–ऋतु)

झुकि–झुकि जाय वदरिया बिना वरसे ।
रुकि रुकि जाय वदरिया विना वरसे ।।
धरनी पियासी पियासो मन तरसे ।
झुकि झुकि जाय वदरिया विना वरसे ।।

पपिहा स्वाति की आसा लगाय
कुहुके मोरा कि वदरा न छाये,
हरियाली धरती की गोदी को तरसे ।
झुकि झुकि जाये वदरिया विना वरसे ।।

जरि गई लता पौध सब जरि गई
बिन पतझर सब पियरी परि गई
वरसे सुरजु सब महा को तरसे ।
झुकि–झुकि जाये वदरिया बिना वरसे ।।

छतिया जो धरती की फटि जहे
लावणी कजरी फिरि को जैहै
सुरखु–सुरखु रमु बहु दिनि दरसे ।
झुकि झुकि जाये वदरिया बिना वरसे ।।

कौन सो काली माघ धरा जनमै,
मेघदूत सो सदेसो भेज छा म,
वरसो इन्दर जो चाहा सब हरषै ।
झुकि झुकि जाये वदरिया बिना वरसे ।।

—

अहसास

[1]

नजदीक का अहसास ही इक सकून है
दरिया की जन्नत ना सकून है ।
क्या खाक जिगर रखा है आपने—
नजरें इनायत हमें दिन का सकून है ।
हसतो हुई दुनिया रही भी साथ कब तक—
गिरते जो हथेली पे वो आंसू सकून है ।।

(2)

शबनमी सी नम रही है हर निगाह
बोलिये कौन सा गीत अब गुनगुनाये
जिस्म है गोया कि दिन के हाथों का खिलौना
बोलिये अपना फसाना गैर को कैसे सुनाये ।।
गमजदा बेनूर हर चेहरा नजर आने लगा
पास की हर शख्स से अजनबी है निगाह ।।
डूबते सूरज सा न रौनक हुई है जिन्दगी
जद होना आसमां दे रहा है सदायें ।।
चिथड़े चिथड़े जिन्दगी सीते रहे ता-उम्र हम
पोंछे जख्मी हुये पैबन्द फिर भी लग न पाये ।।

"आकाशवाणी से प्रसारित'

1 1 84



(3)

सूनी सून महफिले

बहकी—बहकी है निबाह ।

भीड़ है बेताब मगर

किस तरह उल्फत निबाह ?

चश्म दीदाई से खातिर मिल रहा है हर गला

बे हिचक, बेखौफ मिलत ढूंढनी उनको निगाहें ॥

ऐसा जहां की भीड़ म दोस्त भी दुश्मन भी हैं

गैरियत म प्यार बाट ढूंढती उसको निगाह ॥

खा रहा है घी हमम मजहबी नफरत के बीज

गैर ख्वाही कौन ऐसा ढूंढती उसको निगाह ॥

एक लम्हा ही बहुत है चार दिन के वास्त

उल्फते मजमून द दे ढूंढनी उसको निगाह ॥

आज अपने अंजुमन को आ गये दीवारो दर

सब्ज गुलशन को जा रखे ढूंढती उसको निगाह ॥

हर बशर इक कौम का हर बशर हिंदोस्तानी

रस्म उल्फत को निबाहे ढूंढनी उसको निगाह ॥

बाट टुकड़ा म न पाये ढूंढती उसको निगाहें

आकाशवाणी से प्रसारित
1 1 84

(4)

न्द न्ति म जहा भर का वसाये रखिये ।
ग्राग नम हा ता भुकाये रखिये ।।
नही पाय गर तसव्वुर तो गम न करिये ।
ग्राप ग्रपना ही तसव्वुर तो वनाये रखिये ।।
दिन का दामन हो यही राग न भर दे कोई ।
ग्रपने शोला को हाथा मे दबाये रखिये ।।
उम्र हे पायो तो तन्हा न समभना खुद को ।
च न्द लम्हों का सफर साथ निवाहे रखिये ।।
जा भी ग्रजाम हो वो देखा जायेगा ।
नेमते गैरो की सर पे उठाये रखिये ।।

×

(5)

ए खुदा तेरे जहां मे बन्ली हुई तस्वीर क्या ?
दुश्मने जाना बनाती दोस्त की तदवीर क्या ?
जा दुग्रात्रा के लिये हाथ उट्ठे थ कभी
ग्राज उनके हाथ म कातिले शमशीर क्या ?
खून का रग सुर्ख सबका क्या बनाया ए खुदा
वाह गुरु के नाम पर मिटन लगी तकदीर क्या ?
सूली पर लटका मसीहा गैर की क्यो खर मागे
क्या फरेबी अस्मते रहीवदल जमीर क्या ?
मदिरा की घटिया के ग्रन्दाज भी बदले हुये
दुनिया के मालिक तेरी मिटने लगी तासीर क्या ?

"गजल से"

ए जाने गजल महान गजल
तू कहा-कहा गई नही
बादशाहत से फकीरी अन्दाज मे गाई गई ॥

दिल का दर्द बनके तू होठो पे आ छाने लगी,
घुघरुओ की छुमछनन साठो को तू सजाने लगी
जिन्दगी के फलसफे पर बनती रही बिगडती रही
ए जाने गजल ...

बदनसीबी से आह बनी यनी तू जुस्तजू ।
मीर मोमिन गालिब दर्द आबरू व आरजू ॥
चाक दिल नश्तर कही नश्तर चुभोती गई—
ए जाने गजल

सरफरोशी की तमन्नाओ मे कोई गा गया
कौमी उल्फत वास्ते लहराके कोई छा गया
जिस नजर से देखा तुझे तू उसी की हो गई—
ए जाने गजल

बन्द कमर मे जफर मागता तुमसे दुआ
तीन गज के वास्ते दाता भी याचक हुआ ।
किसी की तू दिलरुबा किसी पे कहर ढहाती रही
ए जाने गजल महान गजल तू कहा कहा गई नही ॥



गजल

जो उतर गई हलक म उस यू न आप मथिये ।
जो गुजर चुका जमाना जि दा न आप करिये ॥

दागो को देखकर ही जख्मो की याद ताजा ।
पर्दे म हो गया जो बेपदा यू न करिये ॥

छालो के फूटन की जब याद ही नही है ।
जलने की याद करके खुद को न यू ही छलिये ॥

अब वक्त की इजाजत लब मुस्कराय थाडा ।
इस क्षीण सी हसी की छाया से यू न ठगिये ॥

आकाशवाणी से प्रसारित

(2)

मर जहा स आपका जहान बहुत दूर है ।
चाद तारे पास पर आसमा तो दूर है ॥

जिन्दगी की हर खुशी होठो प आ सिमट गई ।
खिलखिलाहट सपन पर मुस्कुराहट दूर है ॥

टूटती हर लहर का आगोश किनारा बना ।
डूबती किश्ती लहर म तो किनारा दूर है ॥

मजिले मकसूद कुछ रूठी रही इस कदर ।
रास्त ह हमसफर पर हमसफर महरूम है ॥

15 11 84 आकाशवाणी से प्रसारित

▷

जग कैसा हे ?

हवा घुट-घुट क बहती है जीने का ढग कैसा है
सिमटता सूय या बोले जहा का रग कैसा है ?

चल थ चादनी की ग्रास म नव साम पाने का
व्यग था तारावलिया का धरा का ढग कैसा है ?

हरे पत्ते हरी शाखा जडें ह खाखली लेकिन
उसी पर नीड अपना है विधाता व्यग कैसा है ?

आज ता घर चूरह न भरा घर फक ही टाला
उदर म नित सुलगती है जलन का ढग कसा है ?

यहा अपना की ग्राशा मे नही विश्वास की चाहत
कहा विश्वास टकराये मिलन का ढग कसा है ?

जहा हैं हम खडे वह भी धरा ता एक छलावा है
छलावा मौत तक खुद से स्वय का जग कैसा है ?

अमावस दिन दहाडे ही उतर आई धरा पर है
तेज के पुज सूरज का पीत ये रग कैसा है ?

अर ठहरो अभी देखो जरा बहुरुपिय रुख का
हुया हा मुक्त पूछेगी हमारा सग कैसा है ?

आकाशवाणी से प्रसारित 3 5 85



प्रेरणा

अगर प्रेरणा दो मुझको तो मैं दे दूं विश्वास हृदय का

गति मेरे पावों मे लेकिन,

अनजान पथ की मैं राही ।

भटक पथ में मैं जाऊंगी—

अगर तुम्हारी पीर कराही ॥

अगर रुदन का रूप न दो मैं दे दूं मधु हास हृदय का ।

अगर प्रेरणा

मैंने निश्छल चलना सीखा

छलना तुमने मुझे सिखाया

कहना मान चली जब पथ पर—

दोषी तुमने मुझे बताया ।

कितना आंचल फैलाती मैं दे न सके तुम हास हृदय का ।

अगर प्रेरणा

तेरे गीतों पर मैं झूमी

कितनी तेरे द्वारे भटकी,

तेरे अपमानों ने लेकिन—

मंजिल पर ला मुझको पटकी ।

दिया नहीं जाने मैं कुछ भी किन्तु मिला उपहास हृदय का ।

अगर प्रेरणा दो मुझको तो मैं दे दूं विश्वास हृदय का ।

×

प्रश्न

बोलो कब तक और छलोगे ?

सुनो अभी तक सोया है हर गात का
पतझड़ में झरते देखे हैं पात भी
नव पल्लव उगते देखे हैं ठूठ पर—
पाहन उर ने कभी न पाई माग की
उर कलिका तो कुसुम नहीं बन पाई है—
कटक गहन मगर उग आये
बोना कम देख चुनोगे ?
बोलो कब तक प्राण छलोगे ?

अंतर का नारी ने जब करवट बदली
छा गई तभी हाहाकारा की बदली,
मेरा स्व कभी न जीता और जगा—
मैं भू या कण हूं और गगन की तुम बदली
सूखी अनिला मे अगर अनल लग जायगी—
सोच सके क्या नीर मेघ बन पाओगे
बोलो कब तक और छलोगे ?



पहरे

अपने हाथों खोदे गड्ढे आज और भी हैं गहरे।
जीवित लाशों पर लगते हैं दुनिया के तमाम पहरे॥

टाँके-ढाँचे लाश स्वयं की,
कमर झुक गई उम्र की,
जिन्दा दाब क्या पर रखा—
मिला न कोई उम्र की

बीते वर्ष लगे उन्मादित दिवस लगे सागर गहरे।
जीवित लाशों पर लगते हैं दुनिया के तमाम पहरे॥

सोचा थी तो थपकी देकर
अब था मन दिया सुला,
अप्रत्याशित वो अतीत पर—
क्यों देता है मुझे रुला ?

गीले दृग फिर भारी मन पर बोझिल पलकें कब ठहरें ?
जीवित लाशों पर लगते हैं दुनिया के तमाम पहरे॥



आस

मुक्त हँसी तक भीड़ मिली है मुस्काना तक आस पास ।
नीर दृगों से लगा जो झरने कोई न दीखा कोसा पास ।।

प्यार और वात्सल्य में देखा
स्नेह और मातृत्व में देखा,
राग और अनुराग में देखा,
विरह की जलती आग में देखा,
नैना का शकुत ही देखा,
पर सबको अनचीन्हा देखा ।
पर पयोद को कभी न पाया तपती हुई रेत के पास ।
नीर दृगों से लगा जो झरने कोई न दीखा कोसा पास ।।

घर के लोग लगे परदेशी
दर औ दीवार लगी विदेशी,
मुँह चिढ़ाती हँसी उड़ाती,
निकली पास से कभी उदासी
जीवन तो जीवन ही था,
मौत भी भागी पीठ दिखाती ।
दो राह की पगडंडी पर मुट्ठी भींचे मन की आस ।
नीर दृगों से लगा जो झरने कोई न दीखा कोसो पास ।।

रेखा

समय की बढ़ती रेखाओं को गहरी कर लू—
अनजाने कब कौन कहा से मिट जाये ।।

ये रेखायें सिर्फ प्रश्न बन संचित हो यदि—
सोचू उत्तर कौन कहा से पायेगा ?
जीवन क्रम की गति का किसको बोध है
तार मध्य से टूट अगर ये जायेगा ?

सारे उत्तर एक ही साथ ढूढ लू
अनजाने कब प्रश्न कहा से उठ जाये ?
समय की "

प्रश्न चिन्ह अस्तित्व हमारे उत्तर स्वयं सफेदी है ।
कागज ही दर्पण मानव का, दर्पण स्वयं फरेबी है ।
दोष सभी के साथ समय का गुण अवगुण है—
किसको है कब ज्ञान, कहा पैर ये रुक जाये ?
समय की बढ़ती रेखाओं को गहरी कर लू
अनजाने कब कौन कहा से मिट जाये ।।



आस

मुक्त हंसो तक भीड मिली है मुस्का
नीर दृगो म लगा जो झरने कोइ

प्यार और वात्सल्य
स्नेह और मातत्व
राग और अनुराग
विरह की जलती ह
नैना का थकत
पर सबको अनची
पर पयोद को अभी न पाया ,
नीर दृगा स लगा जो झरने का

घर वे लोग न
दर ओ दीवार र
मुंह चिढाती ,
निकली पास स
जीवन ता जी
मौत भी भागी प
क्षा राह की पगडडी पर मु
नीर दृगो से लगा जो झरने

शाप

हुई विजन क्या इतनी बस्तियाँ
दूरी क्या अभिशाप हो गई ?
पद चिह्न तक मन पलक जो
खोजी अपने आप हो गई ॥

दृष्टि पान तक शून्य-शून्य है
और गहन उर का सूनापन ।
होठों की मुस्कान अभागी
कभी छुयेगी मन का आगन ॥
निराश्रिता सी रात जागती
दीप-बिन्दु सी आस हो गई ।
दूरी क्या अभिशाप हो गई ? ॥

सूरज निकला गलियारे तक,
अपना हर दिन घोर अमावस ।
शीतलता पूनम की छन तक,
आगन मेरा तपना पावस ॥
बारहो मास झड़ी सावन की गली में बरसात हो गई
दूरी क्यों अभिशाप हो गई ?



मेरे गीत

अनजाने भी अनचाहे ही आज खो गया मेरा मन
कल तक जो अनदेखे थे उनमें ऐसा अपनापन

नाज मुझे था अपने मन पर फिर भी चिहुक उठा गौरय्या ।
मूर्त-रूप सौंदर्य भावनी उड़ मत जाना बन पुरवैय्या ॥
भावुक मन मयूर क्या नाचा गीत बने होठों के साथी ।
आशा से अनछुई नींद है ज्वलित रहे दीपक की बाती ॥
गहरे नीले झील दृगों से नहा गया ये कोरा तन ।
कल तक जो " " " ॥

प्रकृति परी मैंने कभी थी देखा था सौंदर्य धरा का ।
नील गगन, नक्षत्र गण देखे थे छू न सका रवि तेज जरा सा ॥
दिवा स्वप्न औ प्रेम कहानी सीमित थी उपहासों तक ।
आज मुझे चिर परिचित लगते मन प्रकृति मधु–हासों तक ॥
अनुपम मंजुल रूप तुम्हारा, मंत्र मुग्ध सा मेरा मन ।
कल तक जो अनदेखे थे उनमें देखा अपनापन ॥

×

शाप

हुई विवश क्या इतनी अँखिया
दूरी क्या अभिशाप हो गई ?
पद चिह्नों तक नत पलकें जा
खोजी अपने आप हो गईं ।।

दृष्टि पान तव शून्य-शून्य है
और गहन उर का सूनापन ।
होठों की मुस्कान अभागी
कभी छुयेगी मन का आंगन ।।
निराश्रिता सी बाट जोहती
सीप-बिन्दु सी आस हो गई ।
दूरी क्या अभिशाप हो गई ? ।।

सूरज निकला गलियारे तव
अपना हर दिन घोर अमावस ।
शीतलता पूनम की छत तक,
आंगन मेरा तपता पावस ।।
बारहों मास झड़ी सावन की ऐसी मैं बरसात हो गई
दूरी क्या अभिशाप हो गई ?



मन

मेर अनछुये कुवारे गीता का
आखिर तुमने सुर दे डाला ।
इस मधुर–सुलभ उर कलिका को
आखिर तुमने छू ही डाला ।।

बरसो से सजोया था जिसको–
वह बिखर गया इक ही पल मे,
अपनी सीमा को लाघ सकू–
इतना साहस दे ही डाला ।।1।।

विस्तार कहा तट छू लेगा–
य मौन खडी ही देख सखी
क्यो रह गई खाली अजुली–
और दूर किनारा कर डाला ।।2।।

मेरा अभिन्न मन छिन भिन
ऐसा उलझा रह गई सन
मैं सरल सुलभ सुलझाती रही
ऐसी उलझन मे भर डाला ।।3।।

मेरा प्रतिबिम्ब देख दपरा–
रोया करता है सिसक सिसक
गीले दृग देख नही पाई
इसने तो सागर भर डाला ।।4।।

मेरे अनछुये अधूरे गीतो को
आखिर तुमने सुर दे डाला ।।
इस मधुर सुलभ उर कलिका को
आखिर तुमने छू ही डाला ।।



गीत   बादल

एक एक कर क्वार घन फिर
वन आशा में छाये बादल ।
जीवट मन म उथल पुथल फिर,
सतही जीवन मे क्या हलचल ?
अ जुरी भर पानी लेकर रोया क्या नीलाभ नयन
संचित मरुधरा की पिपास ले
बूद-बूद जल लाये बादल ।
गुप्त अदा मे छाये बादल ।।
तुम निस्सीम व्योम के साथी धरनी की सीमा कब जानी
अहम् धरा के मग न चटके
हो कितने अभिमानी बादल ।
मान करें क्या गुमानी बादल ।।
शायद तुम अनभिज्ञ अभी हो रानी की रूठा मचली से
स्वाभिमानिनी कोप करेगी
तुम हागे मनुहारी बादल ।
मत हो पानी पानी बादल ।।
रूठा रुठी आख मिचौली अपने घर तक सीमित रखो
हसे लोग ये देख तमाशा
लज्जा नही गवानी बादल ।
तुम बरसाओ पानी बादल ।।



सुधि

महुवा जब गाव का चदन
मेरी सुधियो न जन्म लिया ।

कुछ अपने बनकर बिखर गये,
कुछ आसू बनकर निकल गये,
कुछ बने अधबने चित्रित से—
कुछ बाल-सुलभ बन विहस गये ।

खेतो-खेतो की मेडो पर
कुछ ने घासो का रूप लिया ।
महुवा जब गाव का चदन
मेरी सुधिया न जन्म लिया ।।

बचपन पर खडहर ठहर गया
यौवन का द्वार ठहर गया,
क्रीडा के द्वारे उगी घास—
जो अपना था वह बिखर गया ।

कुछ नही पूछती सखी कोयल
बगिया न जीवन बदल लिया ।
महुवा जब गाव का चदन
मेरी सुधिया न जन्म लिया ।।



कृन्दन

आज उमंगों की दुनिया में फीका क्यों है मेरा मन।
शीत वायु के झोंकों में भी तपा जा रहा मेरा तन॥

गीत मुझे मिल चुका और
मिल चुके आज हैं स्वर सार।
भार पड़ा इतना गीतों का
खुल न सके हैं होंठ विचारे॥
मन ही मन इतना गाया पर,
गाना को ना स्वर न पाई।
लौट गये सब सुख तक आकर
दे दे करके अलख दुहाई॥
खड़ा धर कर सुख वैभव पर
शान्त नहीं है मन का क्रन्दन।
शीत वायु के झोंकों से भी
तपा जा रहा मेरा तन॥

स्वयं सुधाकर ने आकर
अपनी किरण सुधा बरसा दी।
अरुणोदय की आभा ने आ
माँग मेरी सिन्दूरी कर दी॥
सप्त दिवाकर उष्ण नहीं थे
किरण किरण आशीष भरी थी।
संध्या मुस्काई धीरे से
मन्द मलय भी गंध भरी थी॥
दीपक की लौ घूंघट खोले
आंखों में छाये सावन घन।
शीत वायु के झोंकों से भी
तपा जा रहा मेरा तन॥



नौजवानों के नाम

नस्य श्यामला धरती नीचे
नील वितान विशाल है ।
और मध्य म फहर रहा
य भारत राष्ट्र निशान है ।।

वह निशान जो हिम से ऊंचा,
बलिदानों का ये प्रतीक है ।
वृद्ध बाल, युवा का प्रेरक
इसके गह्वर म अतीत है ।।

कितनी कौम, जाति, धर्म सब
इसके नीचे एक बनी है ।
एक रंग का खून रहा है
गौरव का अभिषेक बनी है ।।

कोकिल—सी स्वर लहरी म
राष्ट्र गीत मय गात ।
सिंहनाद भी गला फाड़कर
सुर म सुर है मिलात ।।

एकमेव हो जान इस दिन
मन अतीत लहराते ।
आगे परचम पर ही ठहर
गौरवान्वित हो जान ।।

जो होता है वह उत्तम है
पर भविष्य उद्देश्य सम्हालो ।
आलस त्याग उठो युवको
तुम सब अपना देश सम्हालो ।

आजादी का अर्थ नहीं है
मार काट या हिंसा ।
धर्म का पूजन हो महान् है
मन का अपना अपना हिस्सा ।।

आजादी का अर्थ नहीं है
सूना वह वीराना में ।
आजादी का अर्थ नहीं है
नाच उठे गुरुद्वारा में ॥

आजादी का अर्थ नहीं है
चिथड़े हों बस नंगे तन पर ।
आजादी का अर्थ नहीं है—
भूखे नंगे मरो तड़प कर ॥

आजादी का अर्थ नहीं है
व्यभिचारी बन करके नाचा ।
आजादी का अर्थ नहीं है—
लम्बी चौड़ी झूठी हाँका ॥

आजादी का अर्थ देश की खुशहाली है ।
आजादी का अर्थ धरोहर की रखवाली है ॥

उठो जवानो मन्त्र फूंक दो श्रम पूजन का ।
कर्महीनता उठ के त्यागो नाता नहीं जनम का ॥

स्वर्ग धरा पर कैसे उतरे
अपनी माया स्वयं सकोगे ।
कर्मठ का साथी ईश्वर है,
भाग्य नकीर न्त मवाग ॥

अन्दर-अन्दर कर खोखला,
ऐसी नींवें तुम्हीं गिरा दो ।
स्वच्छ समाज का दर्पण बनकर
आज देश को तुम दिखलाना ॥

फिर ये पुण्य पताका होगी—
होंगे तुम असली अधिकारी ।
बिन कर्त्तव्य माँग मत करना—
अधिकारों की ओ अधिकारी ॥

×

बागडोर

आज देश की बागडोर है युवा तुम्हारे हाथों में ।
चिर प्रतीक्षित युग परिवर्तन ला दोगे क्या बातों में ?॥1॥

आशा और विश्वास लिये
भारत ने तुम्हें पुकारा है ।
अशान्ति शान्ति हित भारत भू ने
तेरी ओर निहारा है ॥2॥

क्षेत्रवाद ने जातिवाद ने
धर्मों के आडम्बर ने ।
मानवता आंचल लाल कर दिया
दंगा है नीलाम्बर ने ॥3॥

जिन्दा रहे हैं पश्चिम वाले
हवा पूरबी हुई विषैली ।
स्वार्थ हितों में निज जनता
बने आदर्शों की होली ॥4॥

विश्वासों पर प्रश्नचिह्न उठे
औ आशा पर तम की छाया ।
स्वयं ही भक्षक बन जाना
नैतिकता का कैसा भाषा ?॥5॥

लाल हुई धरती की आभा
पूछ रही मनुज की रोटी ।
फाँस गले जो झगड़ा करते
क्या खाटी भाई की बोटी ॥6॥

गुप्त यातनायें सहायें
अमरीका और फाग पश्चिमी ।
गर्वित जहाँ महात्मा होना
गौरव बातों आज चिन्तनी ॥7॥

उन्नति की प्रतीक तमनीकी
काल नृत्य ऐसा करती है ।
निद्रा-मग्न मत्यु ऐसा आलिंगित
पनघट को मरघट करती है ॥8॥

मदिर मस्जिद, गुरद्वार
भयभीत यहा गिरिजाघर भी ।
आतकित य तुम्हे निहारे
युवा तुम्हारी धरती भी ॥9॥

कुछ पागल ये खातिर
माता पर खूनी धब्ब है ।
सदाचार स धोने होंगे
आचल के खूनी ध०र " ॥10॥

छिद्रित आचल को लिय हाथ
अब मा न तुम्हे पुकारा है ।
उठा लाठला द० सम्हाला
अब य द० तुम्हारा है ॥11॥

माया मल्लिप्त बरली होगी
श्रृगार नया करना होगा ।
जो खोया है विश्वास आज वो
तुमको ही भरना होगा ॥12॥

अनुशासन, महनत, दृढ़ता से
भारत का रूप सुधारो तुम ।
जो वर्षों पहले मलिन हुआ
उस मा का रूप निखारो तुम ॥13॥

तरो शक्ति ही गान बनी
तरा भक्ति पर बान चढ़ी ।
तरी वलिष्ठ भुजाम्रा से
ग्पन भारत की गान बढ़ी ॥14॥

इसलिय मघ स गरज उठा
ले ग्र गड़ाई त्यागा प्रमाट ।
उत्थान तुम्ह करना हागा
दकर व विश्वास ग्रगाध ॥15॥

×

—

युवाओं से

अरे युवाओ आगे आओ, क्षोभ त्याग कुछ करने का ।
आपस मे मिल प्यार बाट लो कुछ मसले हल करने का ॥
अपनी दृढ़ता को पहिचानो
अपने पर विश्वास करो ।
आपस म ही न मर कर
अपना ही मत नाश करो ॥
लौह दण्ड है भुजा तुम्हारी
मस्तक हिम सा दृढ है ।
अरावली सी चौडी छाती
अगद पाव सुदृढ है ।
इतना सब कुछ दिया देव ने
तुम्ह आसरा किसका ?
चट्टानो को चीर, बहा दो नीर,
आसरा किसका ?
अपने दम खम पहिचानो
दास कबीरा तुम ही ।
गौतम, भगत यही जन्मा
आजाद सरीखा तुम ही ॥
कौन कमी है बोलो तुम मे
इतने क्या मायूस हो ? ।
इस युग की तुम महाशक्ति हो
बनते क्या मासूम हो ? ॥
भारत की तकदीर तुम्ही हो
पर तुम य सौगन्ध लो ।
हाथ काट शमशीर बने ना
ना कोई दुमन्त्र हो ॥
करें आरती, दे अजान सब
गबद-पाठ अखड हो ।

चलती रहें प्राथनाय भी
अपना दश अखड हो ॥
जिदा लाग बन फिरत हो
तुमको य भी ज्ञात नहीं ।
अपन म तुम पूण शक्ति हो
धरती पर कोई बोझ नहीं ॥
लहर पवित्र तुम गगा की
सीमाओं पर तुम हो जवान ।
तुम वायुदूत तुम क्षीर पूत
धरती क बट तुम किसान ॥
तुम सोना भी उपजात हो
तुम ही बन्दूक चलात हो ।
जब धनुष बाण लेत कर म
तुलसी क राम कहात हो ॥
करत क्रीडा शिशु बनकर
दैत्यो को देते तुम पछाड ।
दुश्मन की बोली सुनते ही
शेरो सी देत तुम दहाड ॥
तुम द्वेष-भाव का परे हटा
बजोड श्रखला बन जाओ ।
मानव के शबद सूर के पद
रसखान सम्पदा बन जाओ ॥



वैर व्यर्थ के

राजे नमाज व्रत ये मदिर की घटिया,
गिरिजाघरा की प्राथना गुरु की वाणिया ॥
इसा को नही, सबका ही प्यार वाटा है ।
य हम हैं कि धरम प ईमान बाँटा है ॥
जाति या कवच पहनकर शमशीर धरम की ।
खुद के ही टुकडे कर लिये न बात रहम की ॥
आये जे जमी प ना आवाज एक थी ।
जायेंगे तब भी दशा सब की एक सी ॥
ये सिफ हवस है कुछ स्वाथ सध है ।
जो पजाब खालिस्तान के झगडे बन ह ॥
गुरु, पैगम्बर, राम के जो समझ अथ ल ।
झगडे सभी मिट जायें क्या वैर व्यथ ल ? ॥
हिसा से कभी एकता न पूजी गई है ।
इक नम्रता है जिसमे विनय डूनी हुई है ॥
मुट्ठी को बन्द रखने म अपना कायदा ।
चारा अलग लडग भला कौन फायदा ? ॥

×

लोह पुरुष

भाग दश म लिय लोह पुरुष चाहिय ।
भाज द श म लिय सुभाष पूत चाहिय ॥
भावाज वही चाहिय जो एकता का नाद द ।
गिडान वही चाहिय जा मन प्यार का पढे ॥
दक्षिणी तरगें कभी हम मे भा गले मिल ।
धरा रवीन्द्र की कभी कच्छ ■ जा भा मिल ॥
नह पूर्व मार द गाय एमा चाहिय ।
स्नेह की बयार " पल एमा चाहिय ॥

अपनी-अपनी ढपली प राग अलग बज रह ।
अपनी-अपनी भाषायापी प्रात अलग बट रह ॥
भाषा म विवाद नही, रग भेद नीति है—
पार्टी ये बडे भी आपस म टक्कर रह ॥
टूटता को जाड द कडी एसा चाहिय ।
घाव दिल ये भर सके जडी एसी चाहिय ॥

जाति-पाति, वर्ण भेद नीति नही पूरबी ।
अनगरण का घारण द पास भाये दूरी भी ॥
किस की लगी है नजर ग्रहण कौन लग गया ?
असमय म यहा युवक कौन चल गया ?
कूटनीति छन द चाणक्य एसा चाहिय ।
सुदेश हित सुपथ द लक्ष्य एसा चाहिये ॥

गजना जो कर सके हिम के शीश चढ सके ।
एकता के वास्त अखण्डता वरण सके ॥
शक्ति परिचय सही समय पर ही कर सके ।
पथ-प्रदशन सही जन जन का कर सके ॥
बहुजन-हिताय हो वृष एसा चाहिये ।
बहुजन-सुखाय हो पूत एमा चाहिय ॥

आज दश के लिये लोह पुरुष
आज दश के लिय सुभाष पूत



मानवता

धम यहाँ का मानवना है कोम यहा की मानव है
मातृ भारती के पूजक हम स्वाथ पूजता दानव है।

हिंसा का क्या काम धम म
व्यक्ति–व्यक्ति स क्या घबराय ?
अविश्वास की रजधानी म
एक दूसरे स कतराय ॥
धम नहीं पापा का पूजक
नही जातियाँ घणा गिराय।
भाषा नही युद्ध की दातव
रग असत्य नहीं सिखलाय ॥
काई भी हो कहा भले हो
तन का हो वा झकता है।
हो प्रदश चाहे काई भी
भारत म हा बसता है ॥
ऊ च–नीच का जाति–पाँति का
कसा य पाखण्ड है ?
सब प्रथम हम भारतवासी
य विश्वास अखण्ड है ॥



बेदाग हैं

उजियार का काला धब्बा बहुत बड़ा ही दाग है ।
गहन अंधेरे की करतूतें यहाँ सभी बेदाग हैं ।।

दुनिया भर की गंदगियाँ,
गंगा में हैं तो गंगाजल ।
खाते गोता उस गंगा में—
बना न पाये मन निर्मल ।।

इस सभ्य सुशिष्ट समाज के
बाग तुम्हीं पहरेदारा ।
दीप तले तो सदा अंधेरा
तुम तो बस हो रखवारा ।

किस किस का मैं प्रश्न बनाऊँ धुली धुये में आग है ।
गहन अंधेरे की करतूत, यहाँ सभी बेदाग हैं ।

वरिष्ठताओं की सूची में,
प्रथम नाम है पाप का ।
पापी की परिभाषा पूछो
पता नहीं इस बात का ।।

रट रटाये ग्रंथों के कुछ
शब्द अटपट दुहराते ।
नाम धर्म का लेने वाले
नव—केतन हैं लहराते ।।

मदिर की इक क्षुद्र घटिका, धो देती सब पाप हैं ।
गहन अधेरे की करतूतें यहा सभी वेदाग हैं ॥

आड धम की बम निम्न है
लगा खाता याग का ।
किसने ह्राण क्या हा जावे
सही नम सयाग का ॥
लाठी वाला भैंस हाकता,
स्थिति हैं ये आज की ।
अथ उदर की स्वाथपूर्ति
विषम परिस्थिति आज की ॥

किसका हित किसके हाथा हा कहाँ प्रश्न परमाथ है ।
गहन अधेरे की करतूतें यहा सभी वेदाग है ॥



बेदाग है

उजियारे का काला धब्बा बहुत बड़ा ही दाग है।
गहन अंधेरे की करतूतें यहाँ सभी बेदाग हैं॥

दुनिया भर की गंदगियाँ,
गंगा में हैं तो गंगाजल।
गोते खाकर उस गंगा में—
बना न पाये मन निर्मल॥

इस सभ्य सुशिष्ट समाज में
जाग तुम्हीं पहरेदारा।
दीप तले तो सदा अंधेरा
तुम तो बस हो रखवारा।

किस किस को मैं प्रश्न बनाऊँ घुला कुये में भाग है।
गहन अंधेरे की करतूत, यहाँ सभी बेदाग हैं।

वरिष्ठताओं की सूची में,
प्रथम नाम है पाप का।
पापी की परिभाषा पूछो
पता नहीं इस बात का॥
रट रटाये ग्रंथों के कुछ
शब्द अटपटे दुहराते।
नाम धर्म का लेने वाले
नव—केतन हैं लहराते॥

नैतिकता का दिया ताव पर
वह कर, हम आजाद है ।
कणधार हों भ्रष्टाचारी
राम राज्य का नाद है ।
कौन करे अब श्रम का पूजन कुर्सी ही मब सार है ।
सत्य किसे स्वीकार है ?
रक्षक का ठेका ले बैठ
उनको ही ललचाई नजरें ।
निर्माता का ताज पहन कर
खोद रहे हैं गड्ढे गहरे ।।
हाय न्याय का नगा चवाने, कैसे ये आधार हैं ?
सत्य किसे स्वीकार है ?
छ महीने का अभियन्ता
मजिल वही खड़ी हो जाती ।
उम्र बीतती चप्पल घिसत,
नहीं झोपड़ी भी बन पाती ।।
मुक्त हसी वर्द्धमान हस रहा ईमान बना अब भार है
सत्य किसे स्वीकार है ?
दवा बना अब जहर बिक रहा,
मनुज मर ज्यों कीट पतगा ।
चुक जाना भडार वय का,
मौज मर रहा आज लफगा ।।
जीवन दाता विष द देता किस की सेवा निसार है ?
सत्य किसे स्वीकार है ?
खेत और खलिहान भरे हैं ।
बाग-बगीचे हरे भरे है ।
पर ये सब कागज तक सीमित
गह-भडार जरूर भरे हैं ।
निशि दिन महा कृषक मरता है बाध नहर सब क्षार है
सत्य किसे स्वीकार है ?

दर्पण (असामाजिक तत्वो के नाम)

दपरण म मुह दख के पूछो
सत्य किसे स्वीकार है '
एक हाथ हिंसा की लाठी
एक हाथ पाखण्ड है ।
थोथा बडा धरातल लगता
अब नो मूठ अखण्ड है ॥
नैर्सगिक सुख जुटे पडे हो सत्य कहा अनिवाय है ?
सत्य किसे स्वीकार है ?
मधु मिश्रित असत्य की वाणी
चिकनी चुपडी बडी भली ।
ओट अहिंसा रोज ही हत्या
चलता है सब गली गली ॥
गर्मी जब आने धन म हो श्वत कहा अनिवाय है ?
सत्य किसे स्वीकार है ?
झडा अयायी का फहरे
कौन याय के आगे रोय ।
उम्र बीतती रोते—रोते
कौन कहा पर आचल धोय ?
नही सुरक्षित कुछ भी लगता मन म भरे विकार ह ।
सत्य किस स्वीकार है ?
प्रेम खुला चौरह बिकता
विनापन और कितावा मे ।
हया शील सूली पर लटके
लज्जा गई हिसावा मे ॥
अथहीन सब धम–कम है पश्चिम ही आधार है ।
सत्य किसे स्वीकार है ?

नैतिकता को दिया ताक धर
कह कर हम आजाद है ।
कणधार हो भ्रष्टाचारी
राम राज्य का नाद है ।
कौन करे अब यम का पूजन कुर्सी ही सब सार है ।
सत्य किसे स्वीकार है ?
रक्षक का ठेका ले बैठ
उनको ही ललचाई नजरें ।
निर्माता का ताज पहन कर
खोद रहे हैं गड्ढे गड्ढे ।।
हाथ स्वयं का नगा चबाने, कैसे ये आधार हैं ?
सत्य किसे स्वीकार है ?
छ महीने का अभियन्ता
मंजिल वही खड़ी हो जाती ।
उम्र बीतती चप्पल घिसते,
नहीं झोपड़ी भी बन पाती ।।
मुक्त हंसी धर्मान्ध हंस रहा ईमान बना अब भार है
सत्य किसे स्वीकार है ?
क्या बना अब जहर बिक रहा,
मनुज मरे ज्यों कीट पतगा ।
चूक जाता भडार वप का
मौज कर रहा आज लफगा ।।
जीवन दाता विष दे देता किस की सेवा नि सार है ?
सत्य किसे स्वीकार है ?
खेत और खलिहान भरे हैं ।
बाग-बगीचे हरे भरे है ।
पर ये सब कागज तक सीमित
गृह भडार जरूर भरे हैं ।
निशि दिन यहा कृषक मरता है बाघ नहर सब क्षार है
सत्य किसे स्वीकार है ?

सोता सेठ तान कर चादर
मजदूरों की जा गे हालत ।
कागज पर यथक छूट रहे,
असलियत की यहाँ हिफाजत ॥
स्वार्थलिप्त का भूल यही है दीन दुखी की मार है ।
सत्य किसे स्वीकार है ?

सिर्फ योजनायें गढ़ने से,
कागज पर लिखकर पढ़ने से,
हो जाता युग-परिवर्तन
नहीं क्या मरने मरने से ?

कम जहाँ हुकारें भरता
मंगल गान वहीं होते हैं ।
उन्नति बाँह थामती उनकी
कर्मठ श्रम पूजक होते हैं ।

तुम्हें नहीं विश्वास अगर तो—
अपना ही इतिहास भाकलो ।
शायद कुछ पल्ले पड़ जाये
नगन बोस या लाल नाम को ॥

थोड़ा-थोड़ा सबसे लोग—
पूर्ण मनुज तुम बन जाओगे ।
तुम से भी इतिहास बनेगा
नया अगर कुछ गढ़ पाओगे ॥
हार मनुजता में मानो तुम गलती नहीं सुधार है ।
सत्य किसे स्वीकार है ?

जुल्मो सितम तो नहीं आदमियत की इबारत,
पर यही अल्फाज खुद भजमा रहा है आदमी।
है नही इख्तियार खुद की हवस औ ईमान पर,
तोहमते पर दूसरे पर मढ़ रहा है आदमी ॥

× × ×

नेमते जितनी खुदा की सबसे बेहतर आदमी,
खुद-परस्ती के लिये क्यो लड रहा है आदमी,
ताक्ते जेहन मे दी कामयबी के लिये—
गोया खुदगर्जी में ही मशगूल है अब आदमी।

× × × ×

नापाक इरादा पे जिये इंसान नही है
गैरा का हक छीन ले इंसाफ नही है,
द दोस्ती का हाथ मे दुश्मनी हैं क्यो—
पल-पल मे डगमगाये ईमान नही हैं।

× × × ×

इंसानियत पे बदनुमा धब्बा तो मत बनिये,
नैतिकता चरित्र पर हब्बा तो मत बनिये
न गा सकें तो मत गाइये मिलन के गीत—
पर कोयलो के बीच कव्वा तो मत बनिये।

× × × ×

गति, लय, सुर और ताल मिले तो जीवन मिलता गीत को
श्रम और लगन कम को छूते हार पूजती जीत को
नही असम्भव कुछ भी होता शब्द कोष से इसे निकाला
एक रुपया एक ईंट क्या भूल गये इस रीत को ?

मुक्तक

इतनी भी क्या शान्ति, शान्ति क्रन्दन बन जाये,
इतना क्या गाम्भीय, स्वयं मथन बन जाये,
अरे शान्ति के देव ! देव हो, तुम्ही पुजारी–
ऐसी भी क्या प्रीति, हास्य रोदन बन जाये ।

× × × ×

हम शान्ति के पुजारी हैं ये आदत है पुरानी,
इसका सबब ये नही कि वफ जवानी,
उठती है समन्दर मे कभी आग की लपटें–
है खून इन रगों मे, बहता नही पानी ।

× × × ×

जो रंग सजाये वह तस्वीर बनने नही देंगे,
तुमको भारत की तकदीर बनने नही देंगे,
सपनो को सजाओ सवारो अपनी हद तक--
भारत से जुदा वो कश्मीर बनने नही देंगे ।

× × × ×

धागा है महज प्यार का कुछ नही है ये,
व्यापार महज प्यार का कुछ नही है ये,
जाने की चीज हम भी हैं रहने के हम नही-
मुट्ठी है बन्द लाख की वर्ना कुछ नही है ये ।

× × × ×

भिन्न दिशा को जाती सडकें मिलती सब चौराहे पर,
फुटपाथो या गलियारा आती हो दोराहे पर,
मुडती, तुडती सकरी, चौडी, भिन्न भिन्न सब रूप लिये-
क्षनी हैं सन्देश मनुज को छितरे क्यो इकराहे पर ।

